UGC Approved Journal

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

सैंधव व वैदिक काल में व्यापार एवं साधन–एक समीक्षा

सुरेन्द्र सिंह

पी०एच०डी शोध छात्र, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

E-mail:surenderchouhan04@gmail.com

सारांश

प्रारम्भ से ही यात्रा, चाहे उसका उद्देश्य व्यापार रहा हो या जिविकोपार्जन, सभ्यता का विशेष अंग रही है। अत्यन्त प्राचीन काल में भी जब मनुष्य की यात्राओं का एक मात्र उद्देश्य केवल ऐसे स्थानों की खोज था, जहाँ वह आसानी से खाने–पीने की वस्तुएँ जैसे कन्द–मूल–फल एवं पशु तथा रहने के लिए गुफाएँ प्राप्त कर सके, तब भी बड़े–बड़े पर्वत, घने जंगल तथा विशाल रेगिस्तान उसे यात्रा करने से नहीं रोक सके। समय परिवर्तन के साथ उसने यायावरी जीवन का परित्याग कर कृषि तथा पशुपालन के माध्यम से एक स्थान पर स्थायी रूप से रहना प्रारम्भ किया। इस प्रकार जीवन मे स्थायित्व आने पर उसने सभ्यता के प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ना प्रारम्भ कर दिया। प्रारम्भ में तो उसकी आवश्यकताएँ अपने ही क्षेत्र में पूरी हो जाती थी, लेकिन कई वस्तुओं को प्राप्त करने की लालसा ने उसे नये–नये क्षेत्रों में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया, जिससे नये–नये मार्गों का विकास हुआ। देश को पथ–पद्वति के विकास मे कितना समय लगा होगा इसका कोई अन्दाजा नहीं कर सकता। इसके विकास में तो अनेक युग लगे होंगे और हजारों जातियों ने इसमें भाग लिया होगा। आदिम फिरन्दरों ने अपने ढोर–ढंगरो के चारे की तलाश में घूमते हुए रास्तों की जानकारी क्रमश–बढ़ाई होगी, पर उनके भी पहले शिकार की तलाश में घूमते हुए शिकारियों ने ऐसे रास्तों का पता चला लिया होगा जो बाद मे चलकर राजमार्ग बन गये। खोज का यह क्रम अनेक युगों तक चलता रहा और इस तरह देश में पथ–पद्धति का जाल सा बिछ गया।

मूलशब्दः– सैंधव, वैदिक, व्यापार, बन्दगाहँ, सभ्यता, सार्थवाह।

प्रस्तावना

इन रास्ता बनाने वालों का स्मरण वैदिक साहित्य में बार–बार किया गया है। अग्नि को पथकृत इसलिए कहा गया है कि उसने घनघोर जंगलों को जलाकर ऐसे रास्ते बनाये, जिन पर होकर वैदिक सभ्यता आगे बढ़ी।[1] परन्तु उस समय यात्रा सरल नहीं थी, रास्ते मे डाकुओं तथा जंगली जानवरों का सदैव खतरा बना रहता था इसलिए अकेले यात्रा करना निरापद नहीं समझा जाता था। अतः मानव ने इस कठिनाई से पार पाने के लिए एक साथ समूह में यात्रा करने का निश्चय किया और कालान्तर में इन्हीं सार्थवाहों मार्गों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया

भारतीय इतिहास की चतुर्थ शताब्दी ई0पू0 से प्रथम शताब्दी ई0 तक के मध्य सृजित हुए साहित्यिक एवं पुरातात्विक प्रमाण इस काल के मध्य विकसित हुए स्थल एवं जल दोनों ही प्रकार के मार्गों का प्रमाणिक विवरण प्रदान करते हैं। 'थलपथ कम्मिका' (स्थल पथ का अनुसरण करने वाले) एवं 'जलपथ कम्मिका' (जलपथ का अनुसरण करने वाले),[2] तथा 'वारिपथ' एवं 'स्थलपथ',[3] 'नौपथ'[4] ये उल्लेख स्थल एवं जल मार्गों के लिए भारतीय साहित्य में प्राप्त होते हैं। वायु–पथ से की गई यात्राओं के भी अनेक विवरण प्राप्त होते हैं। किन्तु ये यथार्य पृष्ठभूमि के अभाव मे कल्पनात्मक अभिव्यंजन से अधिक महत्त्व नहीं रखते। पुरातात्विक अन्वेषणों से भी इन मार्गों (खग–पथ या वायु–पथ) की प्रमाणिकता को समर्थन प्राप्त नही होता। आज तक हुए अन्वेषणों से न तो वायुपथ से उड़ान भरने वाले किसी

UGC Approved Journal

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

यान की प्राप्ति हो सकी है और न ही किसी हवाई अड्डे के अवशेष मिले है। किन्तु स्थल एवं जलमार्ग के प्रमाण को कदापि अस्वीकृत नही किया जा सकता। उत्तर में हिमालय, दक्षिण में दकन के पठार, मध्य में गंगा, सिन्ध के मैदान तथा तीन और (पूर्व बंगाल की खाड़ी, पश्चिम में अरब सागर तथा दक्षिण में हिन्द महासागर) समुद्र द्वारा घिरे इस देश के पास जल एवं स्थल मार्गों का विकास करने के लिए विशाल क्षेत्र सम्मुख था, जिसके माध्यम से वह पूर्व में चीन, जापान, विभिन्न द्वीपों तथा पश्चिम में अफ्रीका, एशिया के विभिन्न मार्गों और यूरोप तक के राष्ट्रों से सम्बन्ध स्थापित कर सकता था। अतः भारत में हुए जल एवं स्थल मार्गों के विकास की वास्तविकता के प्रमाण स्वतः प्राप्त हो जाते है एवं यूनानी तथा रोमन इतिहासकारों द्वारा प्राप्त विवरणों से इन प्रमाणों की ओर भी पुष्टि प्राप्त हो जाती है।[5]

सैंधव व वैदिक काल में व्यापार एवं साधन

सिन्धु सभ्यता काल

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो बड़े व्यापारिक शहर थे। इन शहरों का व्यापार चलाने के लिए बहुत से छोटे–छोटे शहर और बाजार थे। ऐसे चौदह बाजार हड़प्पा से सम्बन्धित थे और सत्रह बाजार मोहनजोदड़ो से। उत्तर और दक्षिण ब्लूचिस्तान के कुछ बाजारों में भी हड़प्पा–मोहनजोदड़ो के व्यापारी रहते थे। ये बाजार खुले होते थे पर मुख्य शहरों में शहरपनाहें थी। नदियाँ उत्तर और दक्षिण के नगरो को जोड़ती थी तथा छोटे–छोटे रास्ते ब्लूचिस्तान को जाते थे।[6] हड़प्पा संस्कृति में व्यापार के लिए जल एवं स्थल दोनों मार्गों का प्रयोग होता था। हड़प्पा संस्कृति में व्यापार का क्या स्थान था और यह किन स्थानों से होता था– इसका पता मोहनजोदड़ो और हड़प्पा से मिले रत्नों और धातुओं की जाँच –पड़ताल के आधार पर पा सकते है।[7] सैंधव सभ्यता का व्यापारिक सम्बन्ध मुख्यतः पश्चिमी देशों, मिश्र एवं मेसोपोटामिया की सभ्यता के साथ थे। इस काल में दक्षिण–पूर्वी एशिया के साथ व्यापारिक सम्बन्धों का कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

वैदिक काल

वैदिक युग में व्यापारी लम्बी यात्राएँ करते थे जिसका उद्देश्य तरह–तरह से पैसा पैदा करना,[8] फायदे के लिए पूँजी लगाना[9] और काम के लिए दूर देशो में माल भेजना था।[10] तकलीफों की परवाह न करते हुए वैदिक युग के व्यापारी स्थल और समुद्री मार्ग से भारत का आन्तरिक और बाहरी व्यापार जारी रखे हुए थे। पणि इस युग के धनी व्यापारी थे। ऋग्वेद में व्यापारियों के लिए साधारण शब्द वणिज है।[11] व्यापार अदला–बदली से चलता था किन्तु यह कहना कठिन है कि व्यापार किन वस्तुओं का होता था।

यह कहना मुश्किल है कि वैदिक युग में श्रेष्ठि या सेठ होते थे अथवा नहीं। पर ब्राह्मणों में[12] सेठों का उल्लेख है। शायद वे निगम के चौधरी रहे हो। उसी प्रकार वैदिक साहित्य से सार्थवाह का भी पता नही चलता और इस बात का भी उल्लेख नही है कि माल किस तरह एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जाता था किन्तु माल सार्थ ही ढोते रहे होंगे, क्योंकि सड़क की कठिनाइयों से पार पाना उन्हीं के बस की बात थी।

विद्वानों में काफी बहस रही है कि आर्यों को समुद्र का पता था अथवा नहीं। पर यह बहस उस युग तक थी जब हड़प्पा संस्कृति का पता नहीं चला था। हड़प्पा संस्कृति में समुद्री मार्ग से व्यापार होता था। अतः पहले वैदिक आर्यों का हड़प्पा संस्कृति से संयोग हुआ और उन्हें समुद्र का ज्ञान अवश्य रहा होगा।[13] ऋग्वेद[14] और बाद की संहिताओं[15] के अनुसार समुद्री व्यापार नाव से होता था। बहुत से विद्धानों की राय है कि वैदिक साहित्य में मस्तूल और पाल शब्द न होने से वैदिक आर्यों की समुद्र का पता नहीं था, किन्तु इस तरह की बातों मे कोई तथ्य नहीं

UGC Approved Journal

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

है, क्योंकि वेद कोई कोष तो नहीं है जिसमें सब शब्दों का आना जरूरी है। संहिताओं में कुछ ऐसे उल्लेख मिलते है जो समुद्र यात्रा की ओर इशारा करते है।[16] ऋग्वेद में[17] फायदे के लिए समुद्र यात्रा का उल्लेख मिलता है। एक जगह अश्विनी द्वारा एक सौ ड़ाँडो वाले डूबते हुए जहाज से भृज्यु की रक्षा का उल्लेख है।[18] बुहलर के अनुसार यह घटना हिन्द महासागर में भृज्यु की किसी यात्रा की ओर इशारा करती है। जिसमें उसका जहाज टूट गया।[19] उसके जहाज में सौ डाँड लगते थे।[20] जब वह इस दुर्घटना में पड़ा तो उसने किनारे का पता लगाने के लिए पक्षियों को छोड़ा।[21] जैसा कि बाबुली गिलमेश की कहानी में दिशाकाकों का उल्लेख है कि तथा जातकों में जहाजों के साथ 'दिशाकाक' रखने के उल्लेख है। वैदिक युग में बृबु एक बड़ा समुद्री व्यापारी था।[22]

वेदों में नाव–सम्बन्धी बहुत से शब्द आये है। द्युम्न[23] शायद एक बेड़ा था तथा प्लव[24] शायद एक तरह की नाव थी। अरित्र ड़ाँड को कहते थे। ऋग्वेद और वाजसनेयी संहिता में[25] सौ ड़ाँडो वाले जहाज का उल्लेख है। ड़ाँड चलाने वाले अरितु और नाविक नावजा''[26] थे। नौमरण्ड़ शायद लंगर था।[27] और शंबिन शायद भाव हटाने की लग्धी''[28]

कुछ समय पहले तक विद्वानों की यह राय थी कि वैदिक युग में भारतीयों का बाहर के देशों से सम्बन्ध नहीं था। उत्तरभद्र और उत्तरकुरू जिसकी पहचान मीडिया और मध्य एशिया में लू–लान के प्राचीन नाम क्रौरैन से की जाती है, काश्मीर में रखे गये। पर अनेक कठिनाईयों के होते हुए भी, वैदिक आर्य समुद्र यात्रा करते थे तथा भृज्यु और बृबु जैसे व्यापारी इस देश से दूसरे देशों का सम्बन्ध स्थापित किए हुए थे। अभाग्यवश हमें विदेशों के साथ इस प्राचीन सम्बन्ध के पुरातात्विक प्रमाण बहुत कम मिलते हैं, पर वेदों मे विशेषकर अथर्ववेद में, कुछ ऐसे शब्द आये हैं जिनसे यह पता चलता है कि शायद वैदिक युग में भी भारतीयों के साथ बाबुल का सम्बन्ध था।[29]

वेदोत्तर काल

वेदोत्तर काल से पहले आर्य किस तरह इस देश में बढ़े और संगठित हुए यह हम देख चुके है, पर पुरातत्व की सहायता न मिलने से अभी तक उनका इतिहास अधूरा और गड़बड़ है। वेदोत्तरकाल को बौद्धकाल, प्राक मौर्यकाल, महाजन काल आदि नामों से भी जाना जाता है। इस समय देश अनेक जनपदों, महाजनपदों में विभक्त था। इन महाजनपदों में सोलह महाजनपद प्रमुख थे–अंग, मगध, काशी, कौशल, वज्जि, मल्ल, वत्स, चेदि, कुरू, पांचाल, मत्स्य, शूरसेन, अश्मक, अवन्ति, गांधार, कंबुज।

इस काल में मार्गों के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया गया और प्रमुख नगर एवं व्यापारिक केन्द्र मार्गों द्वारा एक–दूसरे से जोड़ दिए गए। पाणिनि ने अनेक व्यापारिक मार्गों का उल्लेख किया है जो एक नगर से दूसरे को मिलाते थे।[30] उस समय वारिपथ, स्थलपथ, रथपथ, करिपथ, अजपथ, शंकुपथ, सिंहपथ, हंसपथ, देवपथ, तथा राजपथ आदि आवागमन के मार्ग विभिन्न नामों से समाज में प्रचलित थे। महानिद्देश में भी व्यापारिक मार्गों का उल्लेख मिलता है जैसे– वण्णुपथ, अजपथ, मेण्ढ़पथ, शंकुपथ, छत्तपथ, वंसपथ, सकुणपथ, मूसिकपथ, दरीपथ तथा वेत्ताचार पथ आदि'।[31] अजपथ बहुत संकरा होता था जिस पर आमने–सामने से आने वाले व्यक्ति एक साथ उसे पार नही कर सकते थे। एक बकरी ही किसी प्रकार इस मार्ग पर चल सकती थी। आजकल भी पहाड़ी प्रदेशों में बकरी और भेड़ों पर छोटे थैलों में सामान लादकर ले जाया जाता है। पहाड़ी और चट्टानी मार्ग को शंकुपथ कहते थे। यह मार्ग बहुत कठिन होता था। इसमें शंकु या लोहे की कीले चट्टान में ठोककर चढ़ाना पड़ता था। जातकों में भी शंकुपथ का उल्लेख मिलता है।[32] मुसिपथ वे पहाड़ी मार्ग थे जिन्हें पहाड़ो को काटकर चूहों के बिल जैसी छोटी सुरंगों की तरह बनाया जाता था। दूरीपथ चौड़ी सुरंगों का मार्ग था। वंशपथ और वेत्ताचार पथ वे मार्ग थे

UGC Approved Journal

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

जहाँ नदी के दूसरे तट पर पहुँचा जाता था। पाणिनि का हंसपथ वही है जो महानिद्देश का सुकणपथ है। वारिपथ जलमार्ग था। करिपथ खुले मार्ग हुआ करते थे। राजपथ राज्य द्वारा निर्मित पक्के, प्रशस्त और सुन्दर मार्ग होते थे। इन मार्गों का उल्लेख दक्षिण–पूर्वी एशिया जाने वाले यात्रियों के कथानकों मे मिलता है।

कात्यायन ने भी कुछ विशेष पथों और उनसे आने वाले सामानों का उल्लेख किया है जैसे– कान्तारपथ से आने वाला सामान कातान्तरपथिक, स्थलपथ से आने वाला सामान स्थलपथिक ओर वारिपथ से आने वाला सामान वारिपथिक आदि नामों से जाना जाता था। कौशाम्बी से अवन्ति होकर दक्षिण में प्रतिष्ठान और पश्चिम में भृगृकच्छ को मिलाने वाला विंध्यावटी या विन्ध्य के बड़े जंगल का मार्ग प्राचीन काल में कान्तारपथ के नाम से जाना जाता था। कात्यायन के वर्णन से प्राप्त होता है कि मुलहठी और मिर्च स्थलपथ नामक मार्ग से उत्तर में लाई जाती थी। यह स्थल पथ दक्षिण भारत के पाण्ड्य देश से पूर्वीघाट और दक्षिण कौशन होकर आने वाला मार्ग हो सकता है।[33] वेतपत्यु की परमत्थदीपनी टीका के अनुसार द्वारका से एक मार्ग मरूभूमि के रेगिस्तान को पार करता हुआ रठोवीर की राजधानी रोठक तक जाता था जहाँ से वह उत्तर की ओर मुड़ कर वाहलीक तथा कम्बुज की तरफ चला जाता था[34]

लेकिन उस समय के मार्गों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मार्ग उत्तरापथ था।[35] मैगस्थनीज मे इसे ''गार्डन रूट''कहा है। इसका वर्णन स्ट्रेबो तथा सिनी जैसे यूनानी इतिहासकारों में भी किया है।[36] यह मार्ग गांन्धार की राजधानी पुष्कलावती से चलकर पुष्कलावती से चलकर तक्षशिला होता हुआ पाटलीपुत्र तक जाता था। इस रास्ते में शाक्ल, हस्तिनापुर, मथुरा, कन्नौज तथा प्रयाग आदि नगर पड़ते थे। पाटलीपुत्र से आगे चलकर ये मार्ग बंगाल के प्रसिद्ध बंदरगाह ताम्रलिप्ति तक जाता था। इस मार्ग पर यात्रियों के ठहरने के लिए सराय, जल के लिए कुएं और छायादार वृक्ष लगे हुए थे। और सर्वत्र एक–एक कोष की दूरी पर सूचना देने वाले चिन्ह बने हुए थे। ताम्रलिप्ति से आगे कई भाग दक्षिण–पूर्वी एशिया जाते थे।

पूर्व में एक मार्ग वाराणसी से सुवर्गभूमि जाता था इसके अतिरिक्त भृगुकच्छ से बर्मा तक और चंपा से बर्मा तक भी अन्य व्यापारिक मार्ग थे। महाभारत के सभा पर्व के अन्तर्गत दिग्विजय पर्व में भी अनेक देशी–विदेशी बन्दरगाहों का उल्लेख मिलता है। इनका उल्लेख सहदेव के दक्षिण विजय के सम्बंध मे है। इन्द्रपथ से चलकर वह मथुरा–मालवा पथ से महिष्मति[37] से होकर पोतनपुर–पैठन[38] पहुँचा। यहाँ से लौटकर वह शूर्पारक[39] पहुँचा। वहाँ से समुद्री मार्ग से यात्रा करके वह सागर द्वीप (सुमात्रा) पहुँचा जहाँ इसने म्लेच्छ राजाओं निषादों, पुरूषादों, कर्णप्रावरणों और कलामुखों को हराया।[40] भीम ने अपनी दिग्विजय में बंगाल को जीतकर ताम्रलिप्ति[41] के बाद सागर द्वीप की यात्रा की ओर वहाँ के राजा को हराकर उसने चन्दन, रत्न, मोती, सोना, चांदी, मूंगे और हीरे आदि लिये।[42] वहाँ से वह कोल्लगिरि (कौरके) और मुरचीपट्टन (मुजिरिस)[43] जीतकर ताम्रद्वीप (खम्बात) पहुँचा।[44] रास्ते में उसने संजयन्ती (संजान) को जीता।[45] इन उल्लेखों से पता चलता है कि महाभारत के रचयिता को ताम्रलिप्ति और भृगुकच्छ होकर सागरद्वीप के जलमार्गों की जानकारी थी।

इस काल में विदेशी व्यापार के निमित्त जल एवं स्थल दोनों मार्गों का उपयोग होता था। बौद्ध ग्रंथों से ज्ञात होता है कि इस काल में भारत के पूर्वी तथा पश्चिमी देशों के साथ घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध थे। भारतीय व्यापारी प्रायः नदी मार्ग से पहुँचते थे। चंपा और बनारस उस समय अच्छे बन्दरगाह माने जाते थे जहाँ से जहाज पहले नदी और फिर समुद्र में जाते थे। परन्तु दक्षिण–पूर्वी एशिया के देशो में जाने के लिए चंपा और बनारस जैसे नदी तटवर्ती नगर विशेष उपयुक्त नहीं हो सकते थे। इसके लिए उस समुद्र तट पर भी अनेक प्रसिद्ध बन्दरगाह थे, जिनमें पश्चिमी समुद्र तट पर भृगुकच्छ,[46] सौपारा,[47] सौवीर[48] तथा पूर्वी समुद्र तट पर करम्बिय[49] गम्भीर[50] और

UGC Approved Journal

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

सोरीव[51] महत्वपूर्ण बन्दरगाह थे जहाँ से जहाज दक्षिण–पूर्वी एशिया के देशों मे जाते थे। कुछ जातक ग्रंथों से पता चलता है कि कुछ साहसी व्यक्ति एवं व्यापारी सुवर्णभूमि धन और लाभ कमाने के उद्देश्य से जाते थे।[52] भारत और दक्षिण–पूर्वी एशिया के देशों के बीच बहुत से व्यापारिक मार्गों का पता चलता है। एक मार्ग भृगुकच्छ बन्दरगाह से प्रारम्भ होकर सुवर्णभूमि[53] और यवद्वीप[54] तक जाता था। दूसरा मार्ग मसुलीपट्टलम से प्रारम्भ होकर बंगाल की खाड़ी से होते हुए पूर्वी द्वीपों तक जाता था।[55] यह यवद्वीप (जावा), सुवर्णद्वीप(सुमात्रा), चंपा(अनाम) और कबुंज(कंबोड़िया) जाने का सबसे सीधा मार्ग था। यह मार्ग गहरे समुद्र में होने के कारण इसके लिए एक विशेष किस्म के जहाज कोलन्दिया की आवश्यकता पड़ती थी। टॉलमी एक अन्य मार्ग के बारे में जानकारी देता है जिसका अधिकतर प्रयोग कलिंग के व्यापारी करते थे। इसके लिए जहाज पोलुरा वर्तमान गोपालपुर से यात्रा आरम्भ करते थे, गंजाम के समीप बंगाल की खाड़ी पार करके सुदूरपूर्व के द्वीपों तक पहुँचते थे।[56] मथुरा, कौशाम्बी, वाराणसी और चंपा के व्यापारियों के लिए सबसे अच्छा व सुविधाजनक बन्दरगाह ताम्रलिप्ति था।[57] ताम्रलिप्ति से खुले समुद्र में से होते हुए जहाज यवद्वीप, चंपा और कंबुज तक जाते थे।[58] जातक कथाओं[59] मिलिन्दपन्हों[60], निद्देश[61] तथा पेतवत्थु[62] मे जलवायु द्वारा सुवर्णभूमि की यात्रा के उल्लेख है। अर्थशास्त्र में भी सुवर्णभूमि की चर्चा की गयी है।[63] सुवर्णभूमि की पहचान सामान्यतः बर्मा से की जाती है।[64] अतः भारत एवं बर्मा के मध्य विद्यमान जल पथ के स्पष्ट प्रमाण इन उल्लेखों से प्राप्त हो जाते है। स्थल पथ के सम्बन्ध में कोई सूचना इन उल्लेखों में नहीं दी गयी है, किन्तु बर्मी एवं चीनी साहित्य के अध्ययन से इसके प्रमाण भी प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार जल एवं स्थल दोनों ही मार्गों से बर्मा के भारत से सम्बन्धित होने के प्रमाण प्राप्त हो जाते हैं। जल मार्ग का तो पूर्व में वर्णन दिया गया है। स्थल मार्ग के प्रमाण चीन एवं बर्मी साहित्य से अध्ययन से ज्ञात हो जाते हैं। बर्मी साहित्य का अध्ययन यह बताता है कि पूर्वी भारत एवं बर्मा के मध्य अराकान से होकर जाने वाला एक सीधा स्थल पथ विद्यमान था।[65] चीनी साहित्य से ज्ञात होता है कि द्वितीय सदी ई0 पूर्व में बंगाल से अपर बर्मा को जाने वाला स्थल पथ लोकप्रिय था।[66] वर्तमान काल में बंगाल से आसाम जाने पर बर्मा को अग्रसर होने वाले तीन प्रमुख पथ विद्यमान है। एक ब्रह्मपुत्र से पटकोई की पहाड़ी श्रृंखला को पार कर अपर बर्मा को जाता है, द्वितीय बंगाल, आसाम से मणिपुर होते हुए हिंदचीन की घाटी (बर्मा) में प्रवेश करता है, तृतीय आसाम से अराकानयोमा पर्वत श्रेणी को पार कर इरावदी की घाटी (बर्मा) को जाता है।

जावा, सुमात्रा, बाली, बोर्नियों, अण्ड़मान निकोबार आदि विभिन्न द्वीप भारत के दक्षिण–पूर्वी समुद्र में स्थित है तथा मलय प्रायद्वीप बर्मा के दक्षिणी भाग के नीचे की ओर स्थित है जिसके अन्तर्गत सिंगापुर, मलाया के अलावा कई छोटे–छोटे राज्य आते है। इन द्वीपों की चर्चा विदेशी व भारतीय साहित्य दोनो में की गयी है। इन्हें संगठित रूप से सुवर्णद्वीप कहा गया है। इन द्वीपों तथा भारत के मध्य विद्यमान पथस्वरूप की सूचना '**पेरिप्लस ऑफ द एरिथ्रियन सी**' तथा निद्देश से प्राप्त होती है। पेरिप्लस भारतीय समुद्र तट के बन्दरगाहों एवं पथ का विवरण प्रदान करते हुए कहता है कि कूलपथ का सहारा ले गंगा के आगे बढ़ते जाए क्राइसे तक पहुँच सकते है। ताम्रलिप्ति से इन विभिन्न द्वीपों की यात्रा के लिए कूलपथ अग्रसर होता था जो प्रथम पूर्व तथा तत्पश्चात् दक्षिण दिशा को झुक कर आगे बढ़ता था।

महाजनक जातक[67] में सुवर्णभूमि की यात्रा का उल्लेख मिलता है। इस काल में भारतीयों ने जलपोतों के निर्माण में बहुत अधिक उन्नति की थी। जलपोतों का निर्माण प्रायः लकड़ी के तख्तों की सहायता से किया जाता था जिन्हें 'पदरानि' कहते थे।[68] जहाजों मे रस्में (योत्रानि), मस्तूल (कूपक), पाल (सित), लंगर (लकार), डॉड और लम्बी–लम्बी पतवारें (फियारितानि) होती थी।[69] जातकों में ऐसे जहाजों का उल्लेख मिलता है जिनमें 1000 यात्री[70] या पशुओं

UGC Approved Journal

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

सहित सात काफिले,[71] यात्रा कर सकते थे। महासमुद्र में पोत का संचालन करने वाले नाविक भी अत्यन्त कुशल होते थे। अनुकूल वायु की सहायता से अपने जहाज चलाते थे।[72] इन यात्रियों में नाविक लोग अपने साथ यात्रा विशेषज्ञों को रखते थे जो रात में भी नक्षत्रों की सहायता से जहाज के लिए मार्ग बता सकते थे। लेकिन ये यदि किसी परिस्थितिवश मार्ग का पता लगाने में असमर्थ होते थे। नाविक लोग अपने साथ विशेष प्रकार के कौवे रखते थे जिन्हें 'दिशाकाक' कहते थे। ये दिशाकाक जिधर जमीन देखते थे उधर की तरफ उड़ जाते थे और नाविक लोग भी अपने जहाजों को उसी दिशा में ले जाते थे। परन्तु भूमि नहीं दिखने पर वे जहाज पर वापस लौट आते थे।[73] दीधनिकाय तथा अँगुत्तर निकाय में भी दिशा बताने वाले कौवें के उल्लेख मिलते है।[74]

उपसंहार

उपर्युक्त विवरण के आधार पर कहा जाता सकता है कि सैंधव एवं वैदिक काल में व्यापार व्यवस्था बहुत अच्छी थी। क्योंकि किसी भी सभ्यता की आर्थिक व्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए व्यापार का होना बहुत जरूरी है। सैंधव व वैदिक सभ्यता के व्यापारी व्यापार करने के लिए दूसरे देशों मे भी जाते थे। वे दक्षिणी पूर्वी देशों पश्चिमी देशों के साथ भी उनका अच्छा व्यापार सम्बन्ध था। सैंधव के निवासी मैसोपोटामिया, मिश्र, ईरान आदि देशों से अपना व्यापार का कार्य करते थे उसी प्रकार वैदिक सभ्यता के निवासी भी अफगानिस्तान, ईरान आदि देशों के साथ व्यापार होता था। इन सभी विदेशो से इस काल के लोग आयात–निर्यात आदि के द्वारा व्यापार किया करते थे। दोनो सभ्यताओं के लोग जलमार्ग एवं स्थलमार्ग के द्वारा अपना व्यापार किया करते थे। यहाँ के निवासी व्यापार के द्वारा अपना निर्वाह किया करते थे। दोनो सभ्यताओं के व्यापार करने के बड़े–बड़े स्थलमार्ग व जलमार्ग थे जिनके द्वारा ये वस्तुओं को एक दूसरे के पास पहुँचाते थे। इस प्रकार कहाँ जा सकता है कि सैंधव एवं वैदिक काल में व्यापार एवं साधन काफी मजबूत थी।

सन्दर्भ सूची

1. मोतीचन्द्र, *सार्थवाह,* पृ0 1
2. *जातक,* 1/121
3. *अर्थशास्त्र,* पृ047
4. *रामायण,* पृ0 3, 21
5. सरला, चोपड़ा, *प्राचीन भारतीय पथ,* पृ0 3
6. मोतीचन्द्र, *पूर्वोक्त,* पृ0 31
7. *वही,* पृ0 31
8. *ऋग्वेद,* 3/118/3
9. *अथर्ववेद,* 3/15/6
10. *वही,* 3/15/7
11. *ऋग्वेद,* 11/12/11; 5/45/6
12. *ऐतरेय, ब्राह्मण,* 3/30;*कौषितकी ब्राह्मण,* 28/6
13. मोतीचन्द्र, *पूर्वोक्त,* पृ0 41
14. *ऋग्वेद,* 1/131/2;2/39/4
15. *अथर्ववेद,* 2/36/5; 5/19/8

16. मोतीचन्द्र, *पूर्वोक्त,* पृ0 42
17. *ऋग्वेद,* 1/66/2; 4/55/6
18. *वही,* 1/116/3, *वैदिक इण्डेक्स* 1,461–462
19. *वैदिक इण्डेक्स,* 2, 107–108
20. *ऋग्वेद,* 1/116/6
21. *वही,* 6/02/2
22. *वही,* 6/46/31–33
23. *वही,* 6/19/14
24. *वही,* 1/102/6
25. *वही,* 1/110/6, *वाजसमेयी संहिता* 21/7
26. *शतपथ ब्राह्मण,* 2/3/3/6
27. *वही,* 2/3/3/16
28. *अथर्ववेद,* 9/2/6
29. मोतीचन्द्र, *पूर्वोक्त,* पृ0 43
30. *अष्टाध्यायी,* 4/3/25; 'तद्गच्छति पथि दूतयोः'
31. *महानिद्देश,* 1/151–55, 414–415
32. *जातक,* 3/541, 'वेत्तचारो संकुपथ पि छित्रे'
33. अग्रवाल, वासुदेव शरण, *पाणिनी कालीन भारतवर्ष,* पृ0 233
34. *वही,* पृ0 234
35. *अष्टाध्यायी,* 5/1/77
36. ट्रार्न, *ग्रीक्स इन बैक्ट्रिया एण्ड इण्डिया,* पृ0 488–489
37. *महाभारत,* 2/28/11
38. *वही,* 2/28/39
39. *वही,* 2/28/43
40. *वही,* 2/28/44–45
41. *वही,* 2/27/22
42. *वही,* 2/27/25–26
43. *वही,* 2/27/45
44. *वही,* 2/27/46
45. *वही,* 2/27/47
46. *जातक,* 3/126–128
47. *वही,* 4/138
48. *वही,* 3/470
49. *वही,* 5/75
50. *वही,* 1/239

UGC Approved Journal

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

51. *वही,* 1/111
52. *वही,* 3/188, 4/15–17, 6/30–34
53. *वही,* 3/188
54. जावा के इतिहास से पता चलता है कि यह द्वीप सबसे पहले गुजरात के राजकुमार का उपनिवेश बना, जो वहाँ पर 75 ई0 में पहुँचा, *चंपा,* पृ0 12, आर0सी0 मजुमदार, *सुवर्णद्वीप,* 1/4
55. डब्ल्यू0 एच0 स्कॉफ, *पेरीप्लस ऑफ दि एरीथ्रियन सी,* पृ0 60
56. जे0 ई0 जेरीनी, *रिर्सचस ऑन टॉलमीज ज्योग्राफी,* पृ0 743
57. बलराम श्रीवास्तव, *ट्रेड़ एण्ड़ कॉमर्स इन एंशियेण्ट इण्ड़िया,* पृ0 109
58. *वही,* पृ0 109
59. *जतक,* 4/442/ 6/539, 3/360
60. *मिलिन्दपन्हो,* पृ0 351
61. *निद्देश* 1, पृ0 154–155, 414–415
62. *पेतवत्थु,* पृ0 47, 271–272
63. *अर्थशास्त्र,* 2/11, पृ0 78–79
64. आर0सी0 मजुमदार, *हिन्दू कालोनीज इन द फार ईस्ट,* पृ0 4,7
65. आर0सी0 मजुमदार, *एंशियेण्ट कालोनीज इन साउथ ईस्ट एशिया,* पृ0 4
66. आर0सी0 मजुमदार, *पूर्वोक्त,* पृ0 12, 1/13
67. *जातक,* 4/134, 6/34, 4/33–42
68. *वही,* 2/111, 4/20
69. *वही,* 2/212, 3/126, 4/17, 21
70. *वही,* 4/159
71. *जातक,* 6/30
72. *वही,* 1/239, 2/112
73. *जे0आर0ए0एस0,* 1889, पृ0 432
74. *दीघनिकाय,* 11/85, *अंगुत्तर निकाय,* 3/367